International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 04-09-2023, Accepted: 20-09-2023, Published: 05-10-2023
Volume 9, Issue5, 2023, Page No. 41-45

प्रेमचंद के हिन्दी उपन्यासों में और मार्टिन विक्रमसिंह के सिंहली उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा शैली

दिलंका रसांगी नानायाक्कार
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
प्रेमचंद और मार्टिन विक्रमसिंह 20 वीं सदी के अलग अलग भौगोलिक परिस्थितियों में यानी भारत में और श्रीलंका में पले–पढ़े महान उपन्यासकार थे। उनके कई उपन्यासों में सरल और सामान्य शैली की ही प्राधान्य मिलता है। कई उपन्यासों में नाटकीयता और व्यंग्यात्मक शैली पात्रों के संवादों में यत्र–तत्र मिलती हैं। इतना ही नहीं अलंकारिक शैली भी कई स्थानों में विद्यमान है। प्रेमचंद और विक्रमसिंह के उपन्यासों को पढ़ने से यह भी विदित होता है कि दोनों उपन्यासकारों ने अपने कथ्य को प्रस्तुत करने हेतु वर्णनात्मक और चित्रात्मक भाषा शैली का भी प्रयोग किया था।
दोनों के उपन्यास यथार्थोन्मुख है। उन्होंने अपनी कला को साहित्य के माध्यम से पूर्ण परिपाक तक पहुँचाया। इसी कुशलता के कारण उपन्यास क्षेत्र में उनकी अलग पहचान बन गयी। प्रेमचंद से अपने परवर्ती उपन्यासकार भी मार्गदर्शन पाए थे।

मूल शब्दः परिपाक, परिस्थिति

भाषा से सुन्दर निर्माण करने के लिए प्रेमचंद और मार्टिन विक्रमसिंह ने उचित शिल्पों और शैलियों का प्रयोग किया था। जीवन के विस्तृत और सूक्षम चित्रण भाषा के माध्यम से जीवंत बनाने के लिए उपन्यासकारों ने उन शिल्पों का उपयोग किया है। भाषा की तरह कथा शिल्प और शैली, उपन्यास को सफल बनाने में मदद करते हैं।

तथ्य विश्लेषण

किसी भी साहित्यकार के लिए जितना उसका कथ्य महत्वपूर्ण है, उतनी उसकी संप्रेषित करने की क्षमता महत्वपूर्ण होती है। यही क्षमता ही उस साहित्यकार की पहचान है। यह क्षमता विभिन्न काल, विभिन्न देश और विभिन्न साहित्यकारों की रूचि के अनुसार भिन्न होती है। इसका कारण मनुष्य के परिवर्तनशील गुण है। हमेशा चेतनशील व्यक्ति पुरानी बातों को छोड़कर कुछ नया करने का प्रयास करता है। यह प्रयास पाठकों द्वारा स्वीकृत होने पर ही उसके लेखन की लोकप्रियता होती है। उपन्यास के लिए भी यही बात लागू है। उपन्यास के आरंभिक चरण से आधुनिक समय तक आते–आते उसके अनेक रूप विक्सित हुए। साथ ही उसके भाव और कला दोनों क्षेत्रों में बदलाव आ गया।
प्रेमचंद के पूर्व अन्य उपन्यासकरों के उपन्यासों का वस्तु–विषय, रहस्यमय, नाटकीय, कौतूहलपूर्ण व रोमांचकारी घटनाओं से भरा था। इसलिए उस पूर्ववर्ती उपन्यासकारों के उपन्यासों और प्रेमचंद के उपन्यासों में स्पष्ट अंतर नज़र आता है। प्रेमचंद के पूर्ववर्ती लेखकों ने हमेशा पाठकों को यथार्थ से दूर एक सुन्दर आयाम तक पहुँचाने की कोशिश की जिससे वे अपने जीवन के कष्टों को भुला सकें। पर प्रेमचंद हमेशा यही चाहते थे कि पाठकों को यथार्थ दिखाए।
वे उर्दू से हिंदी में आये हुए लेखक हैं। अतः उनके कथा साहित्य में भाषा का क्रमिक विकास मिलता है। उनके कथा साहित्य पर दृष्टिपात करने से यह गोचर होता है कि उनकी प्रारंभिक रचनाओं की अपेक्षा परवर्ती रचनाएँ अधिक प्रौढ़, परिष्कृत एवं प्रभावशाली है। उन्होंने अपने उपन्यासों के कथ्य में हमेशा वही समाज दिखाया, जहाँ मनुष्य की समस्याओं से जुड़ा हुआ है। पाठकों को वैचारिक संकीर्णताओं से मुक्त कराने के लिए उन्होंने हमेशा सहज, बोधगम्य, प्रवाहमयतापूर्ण रोचक भाषा का प्रयोग किया है। इसलिए पूर्ववर्ती उपन्यासकारों के शिल्प से प्रेमचंद के उपन्यासों के शिल्प में अंतर आना स्वाभाविक है।
विक्रमसिंह और प्रेमचंद दोनों उपन्यासकारों के उपन्यास पढ़ने से यह बात भी विदित होता है कि दोनों के उपन्यास कला की प्रेरणा कोई देशी पूर्ववर्ती उपन्यासकार नहीं, बल्कि विदेशी उपन्यासकार गोर्की और टॉलस्टॉय अदि में हैं। पाश्चात्य शिल्प को भी अपने कथ्य में समाहित करके उपन्यासों के माध्यम से, वे पारंपरिक रूढ़ियों से अलग एक नयी पहलू सामने लाये थे।
आरंभिक उपन्यासों में प्रेमचंद और विक्रमसिंह दोनों का उद्देश्य यह था कि पाठकों को यथार्थ से दूर ले जाना, जहाँ वे जीवन की कटुता भूल सकें। प्रेमचंद के आरंभिक उपन्यास जैसे असरारे मआबिद(देवस्थान रहस्य), किशना, रूठी रानी, प्रेमा आदि और विक्रमसिंह के आरंभिक उपन्यास, जैसे लीला, सोमा, अइरंगनी आदि रचनाएँ तिलस्मी और बचकाना प्रेम–प्रसंगों से भरे रहते थे। जब प्रेमचंद ने हिन्दी साहित्य में सन् 1916 में 'सेवासदन' और विक्रमसिंह ने सिंहली साहित्य में सन् 1944 में 'गम्पेरालिय' उपन्यासों का प्रकाशन किया, तब उपन्यास क्षेत्र में एक क्रांति–सी मच गयी थी। तिलस्मी, बचकाना विचारों से अलग, जीवन के यथार्थ को पाठकों के सामने लाना ही उनका उद्देश्य था। यही विचार, उनके परवर्ती उपन्यासकारों ने भी अपनाया था।
उपन्यासों के कथानक का विकास पर दृष्टिपात करें, तो यह बात भी विदित होता है कि दोनों उपन्यासकारों ने उपन्यास के कथानक को ध्यान में रखकर सारे शिल्प–विधान का प्रयोग किया है।
प्रेमचंद के असरारे मआबिद, रूठी रानी अदि उपन्यास और विक्रमसिंह के रोहिणी, उन्माद चित्रा आदि उपन्यास ऐतिहासिक घटनाओं को चित्रित करते हैं। उदाहरणवश प्रेमचंद का उपन्यास, रूठी रानी का देशकाल शेरशाह सूरी और हुमायूँ के समय से संबंधित है और विक्रमसिंह का रोहिणी उपन्यास, दुटुगेमुणु राज समय से संबंधित है। उपन्यासों की कथा राज–परिवार से संबंधित होने के कारण उपन्यासों में देश–काल का अधिकांश चित्रण राज–परिवार के जीवन तक सीमित रहा। साथ ही ऐतिहासिक उपन्यास होने के कारण दोनों लेखकों ने उन उपन्यासों में अंग्रेज़ी शब्दों का एक भी प्रयोग नहीं किया था। उपन्यासों में कथा वर्णन को प्रमुखता देना उनका अभिप्राय था।

इसलिए मुहावरे और अलंकारों का अधिक प्रयोग भी दोनों लेखकों ने नहीं किया।

लेकिन प्रेमचंद के उपन्यास रंगभूमि, गोदान अदि और विक्रमसिंह के मिरिंगुव, युगांतय अदि उपन्यासों के कथानक का देश–काल अंग्रेज़ों के समय के समाज को दर्शाता है। विदेशी प्रभाव में आकर पूँजीपति समाज द्वारा मज़दूरों का शोषण किया जाना और अंग्रेज़ी खान–पान, रहन–सहन, बात–चीत अपनाने में देशी लोगों का उतावलापन कथानक के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हैं। इसलिय दोनों उपन्यासकारों ने अंग्रेज़ी शब्दों का भरपूर प्रयोग किया था।

विक्रमसिंह का बाल उपन्यास मडोल दूव का कथानक बाल मन को लुभाने के लिए रचा गया था। बालकों के किसी बात को लेकर उत्पन्न कुतुहल, उनके निर्भीक कार्य पूरे उपन्यास के कथानक के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है

व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग

अपने तथ्य की स्वाभाविकता को बढ़ाने के लिए दोनों उपन्यासकारों ने व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया था। कथानक् में ऐसी स्थितियाँ भी आ गयी है जिनको व्यंग्य का सहारा लेकर प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त किया गया था। यह कुशलता दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में प्रायः देखी जा सकती है।

प्रेमचंद के इस व्यंग्यमय भाषा की वजह से ही उनके कथा–साहित्य में संवेदनशील यथार्थ परिलक्षित हुआ। प्रेमचंद का व्यंग्य कटुता से भरा नहीं है और न ही चुभने वाला व्यंग्य का प्रयोग उन्होंने किया। उन्होंने अपने उपन्यासों द्वारा केवल समाज की कुरीतियों को उभारकर सामने प्रकट किया था। उनकी व्यंग्यात्मक सुबोध भाषा, पाठक को स्पष्ट गोचर होती है।

कर्मभूमि उपन्यास के शान्तिकुमार धर्म–प्रेमियों पर व्यंग्य करते हुए कहता है;– "वाह! क्या कहना है, तुम्हारी भक्ति का। जो जितने जूते मारेगा, भगवन उस पर उतने प्रसन्न होंगे।" दूसरी ओर अछूतों से कहता है;–"तुम्हें इतनी खबर नहीं कि यहाँ सेठ महाजनों के भगवान रहते हैं। तुम्हारी इतनी मजाल कि इन भगवान के मंदिर में कदम रखा? तुम्हारे भगवान कहीं किसी झोंपड़ी या पेड़ तले होंगे। यह भगवान रत्नों के आभूषण पहनते हैं, मोहन भोग, मलाई खाते हैं। चीताड़े पहनने वाले और चबेना खाने वालों की सूरत वह देखना नहीं चाहते।"[1]

'गोदान' में पूँजी अथवा धन को नयी सभ्यता का आधार मानते हुए प्रेमचंद ने लिखा है– "इस नयी सभ्यता का आधार धन है, विद्या और सेवा और कुल और जाति सब धन के सामने हेय हैं। कभी–कभी इतिहास में ऐसे अवसर आ जाते हैं, जब धन को आन्दोलन के सामने नीचा देखना पड़ता है, मगर इसे अपवाद समझिए।"[2]

इस तरह उपनिवेश के साथ–साथ किसानों पर पड़ने वाले दबावों के कारण अक्सर कुचले जा रहे न्याय के विषय में प्रेमचंद व्यंग्यात्मक भाषा में बताते हैं; "ऊपर से दबाव पड़ेगा। राजनीति के सामने न्याय को कौन पूछता है। उसे फाँसी देते हुए सरकार भी सोच–विचार करेगी।"[3] अंग्रेज़ों के समय, किसी भी सन्दर्भ में नेतृत्व लेने से डरने वाली, हर बात पर पीछे हटने वाली भारतीय जनता के सन्दर्भ में, उनकी स्थिति को अभिव्यक्त और रेखांकित करते हुए प्रेमचंद ने अपनी भाषा में व्यंग्यात्मकता का प्रयोग किया था।

गोदान के 'होरी' के विषय में प्रेमचंद कहते हैं; "होरी मालिक के पास जाने को तैयार हुआ। लेकिन फिर सोचा, उन्होंने कारकुन को एक बार जो हुकुम दे दिया, उसे क्यों टालने लगे? वह अगुवा बनकर क्यों बुरा बने? जब और कोई कुछ नहीं बोलता, तो वही आग में क्यों कूदे? जो सबके सर पड़ेगी, वह भी झेल लेगा।"[4]

इस प्रकार विक्रमसिंह ने भी अपने उपन्यासों में व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया था। 'गमपेरलिय' उपन्यास में नन्दा के परिवार कुलीन, उच्च वर्ग का परिवार था। पियल के पास कुलीनता या उच्च वर्ग का सम्मान न भी हो, चलते समाज में धन और कूट बुद्धि से वह आगे था। नन्दा से शादी का प्रस्ताव कई बार वह गाँव की एक औरत, जो नंदा के परिवार के साथ संबंध रखती है, उसके हाथ में भेजा था, फिर भी उस समय नन्दा की माँ मातरा हामिने ने 'उससे कौन रिश्ता जोड़ेगा, उसका क्या औकात है, हमारे परिवार से जुड़ने का' कहते हुए प्रस्ताव को ठुकराकर माँ–बाप ने अपनी बेटी नंदा की शादी कुलीन परिवार के गरीब जिनदास से करवा दिया। मातरा हमिने की इन शब्दों द्वारा मार्टिन विक्रमसिंह ने पियल के कुलहीन परिवार पर व्यंग किया था।

पैसे कमाने सुदूर शहर में जाने के बाद जिनदास की मौत हो जाती है। इस हादसे का फायदा उठाकर पियल, कुलीन परिवार के साथ जुड़ने का अपना सपना पूरा कर लेने के लिए दुबारा नन्दा से शादी का प्रस्ताव मातर हमिने के सामने रखता है। विवश होकर अंत में मातरा हमिने को नन्दा की शादी पियाल से ही करवाना पड़ता है। यहाँ पर विक्रमसिंह कुलीन समाज की खोखालेपन को पाठक के सामने प्रकट करता है। यही नहीं उस समय नंदा और पियाल के बीच हो रहे वार्तालाप भी व्यंग्य के स्वरुप में विक्रमसिंह प्रस्तुत करते हैं।

नन्दा अपने महागेदर यानी की अपने बचपन का घर, के टूट जाने की खबर जब पियाल से करती है, तब पियल उपहास भरी आवाज़ में नन्दा को इसका जवाब देता है।

'घर का एक हिस्सा पूरा गिरा जा रहा है। कई साल से इसकी मरम्मद न कराने की वजह से कितना ख़राब हो गया है। लेकिन गिरे तो भी, उस घर को छोड़ कर माँ तो कही और नहीं जाएगी। सुनो, क्या हम घर की कुछ मरम्मद करवा दें।'

"क्यों! माँ ने ऐसा कहा क्या?" पियल ने व्यंग्य भरी हँसी के साथ नन्दा से पुछा।

"नहीं, नहीं माँ कभी नहीं कहेगी।"[5]

इस प्रसंग से विक्रमसिंह यह बताना चाहते हैं कि जिन लोगों ने कुलहीन होने के कारण अपमानित करके पियल को ठुकरा दिया, लेकिन अपने घर की मरम्मद के लिए भी एक फूटी कौड़ी तक उनके पास न होने के कारण, पियल से ही मदद माँगनी पड़ी।

इस के अलावा जब नन्दा को अपने पहला पति जिनदास की मौत की खबर मिली, तो वह पियल की माँ के साथ उस जंगली इलाके में गयी, और अंतिम संस्कार करवाके वापस आ गयी। इसके बारे में जब पियाल को पता चला, तब उसने पहले अपने रिश्ते को ठुकराने वाली नन्दा पर हँसते हुए व्यंग किया;

"ओ...हो., ज़रूर उसका अंतिम संस्कार मेरे ही पैसों से किया होगा, है न!"[6] पहले कुलहीन होने के कारण नन्दा के परिवारवाले, पियल के साथ ताल–मेल रखना नहीं चाहते थे, अब उन्हीं लोगों को जिनदास के अंतिम संस्कार करने के लिए पियल के ही पैसों की ज़रुरत पड़ी। इस संदर्भ को विक्रमसिह ने व्यंग्यपूर्ण भाषा में पाठक के सामने रखा था।

जिस प्रकार मार्टिन विक्रमसिंह ने अपने उपन्यास युगांतय, कलियुगय, मिरिंगुव आदि को व्यंग्यतापूर्ण भाषा से निर्मित किया, उसी प्रकार प्रेमचंद ने भी अपने उपन्यास गोदान, प्रेमाश्रम, कर्मभूमि आदि को व्यंग्यपूर्ण भाषा से सजाया। प्रेमचंद के उपन्यासों में गाँव और शहर, ज़मींदार और किसान, मिल–मालिक और मज़दूर, शिक्षित और अशिक्षित एवं ब्राह्मण और चमार आदि प्रसंगों के पात्रों में उपलब्ध संवादों से पाठक को हर कही विरोधी संरचनात्मक समांतरता नज़र आती हैं। इस प्रकार प्रेमचंद ने व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग करके अपने उपन्यासों को स्वाभाविक बनाया।

उपहासात्मक व हास्य प्रधान उक्तियों का प्रयोग

उपहासात्मक व हास्य प्रधान उक्तियाँ अशिक्षित, समाज के बोलचाल की जन भाषा में देखने को मिलते हैं। उन उक्तियों का प्रयोग अपने उपन्यासों में करके प्रेमचंद और विक्रमसिंह ने उस समाज के विचारों को मुखरित किया था। जैसे– प्रेमचंद का उपन्यास रंगभूमि में जब सुभागी अपने पति भैरो से मार खाने की डर से आकर सूरदास के घर में छिप जाती है। तब भैरो आकर सुभागी को निकालने की प्रयास करता है। उस समय सूरदास और भैरो के बीच जो बहस हो जाती है, वह गाँव भर फैल जाती है। उधर आये हुए गाँव के पण्डाजी नायकराम, अंधे सूरदास का हँसी उड़ाते हुए बोलता है– "क्यों सूरे, अच्छी सूरत देखकर आँखें खुल जाती है क्या? मोहल्ले ही में?"[7]

गबन– 'जालपा ने ऐसी निगाह से मेरी तरफ़ देखा, जिसमें सच्चे प्रेम के साथ सच्चा उल्लास आशीर्वाद भरा हुआ था। वह मिचवन, आह! कितनी पाकीज़ा थी, कितनी पाक करने वाली उनकी इस बेगरज़ ख़िदमत के सामने मुझे अपनी ज़िन्दगी, कितनी ज़लिल, कितनी काबिल नफ़रत मालुम हो रही थी।'[8]

इस तरह के उपहासात्मक उक्तियाँ विक्रमसिंह के उपन्यासों में भी देख सकते हैं। गम्पेरालिय उपन्यास में नन्दा उच्च समाज की पली–पड़ी स्त्री है। उसका दूसरा पति पियल भले ही निम्न वर्ग का हो, फिर भी नन्दा से शादी करने के बाद पियाल को और उसके परिवार को वही सम्मान मिलने लगा। पियाल से शादी करने के बाद उसके एक रिश्तेदार की शादी में नन्दा को भी बुलावा आया। पर उच्च वर्ग के घमंड ने नन्दा को रोक लिया। इस पर पियाल की माँ उसे उपहासात्मक व्यंग्य करती है। 'पियाल की माँ यही चाहती थी कि वह लैसी की शादी में महगेदर की खूबसूरत युवती नन्दा के साथ गाड़ी में जाकर उतरे और सभी गाँव वालों के सामने घमंड से जाए। पर नन्दा को वह बात पसंद नहीं थी। वह कहती है–

"बचपन में भी हम लैसी के घर नहीं गये। मुझे नहीं जाना है वहाँ। आप जाइए।"

"मातर हामिने भी नहीं जाती, क्या?" पियल की माँ ने पुछा।

"माँ जाएगी"

"माँ जाती तो बेटी क्यों नहीं जाना चाहती?" कहकर पियाल की माँ ने व्यंग्यात्मक हँसी के साथ पुछा।[9]

विक्रमसिंह ने नन्दा के घमंड पर व्यंग्य करते हुए यह बताना चाह कि अगर कुलीन परिवार की मातरा हमिने लैसी के घर जाए तो उसकी बेटी नन्दा क्यों न जाए।

कथानक की सफलता

दोनों उपन्यासकारों की, और एक विशेषता यह है कि उनके उपन्यासों के कथानक की सफलता। भाषा की रोचकता के बिना सफल उपन्यास का निर्माण नहीं हो सकता। अतः उपन्यास को सफल बनाने के लिए उपन्यासकार ने अपनी सृजनात्मकता से भाषा की अनेक विशेषताओं का प्रयोग किया। उपन्यास को पढ़ने से पाठक के मन में दृश्य बिम्ब पैदा होना इसका से एक लक्षण है। अर्थात कथानक का बहाव ऐसा होता है, जैसे पाठक के मन में एक फ़िल्म चल रही है। सफल उपन्यासों में वर्णित वातावरण का दृश्य पाठकों के मन में चित्रित होता है। प्रेमचंद और विक्रमसिंह के उपन्यासों में निहित दृश्य बिम्ब इसका प्रमाण है।

गोदान उपन्यास में प्रेमचंद वातावरण का वर्णन इस प्रकार करता है; 'जेठ का सूर्य आमों के झुरमुट से निकलकर आकाश पर छायी हुई लालिमा को अपने रजत–प्रताप से तेज प्रदान करता हुआ ऊपर चढ़ रहा था और हवा में गर्मी आने लगी थी। दोनों ओर खेतों में काम करने वाले किसान उसे देखकर राम–राम करते...'[10]

इस तरह विक्रमसिंह भी अपने उपन्यास लीला में जब प्रेमी और प्रेमिका रात के अँधेरे में अकेले रह जाते हैं, तो उस वातावरण का वर्णन इस प्रकार करते हैं; 'सूर्य को अस्त होकर अँधेरा छा गयी। फूलों से भरे पेड़–पौधों के कारण चाँद की रोशनी भले ही उनपर न पड़ी हो, फ़िर भी बिजली की हलकी रोशनी ने माहौल का अँधेरा मिठा दिया।'[11]

नाटकीयता

दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में कौतूहल, रहस्य, और नाटकीयता झलक रहे हैं। जैसे विक्रमसिंह के बाल उपन्यास 'मडोल दूव' के एक प्रसंग में लड़के पानी भरने आई लड़कियों को छेड़ने के लिए गुलेल से मारते हैं। लड़कियों का चिल्लाना, फिर उनको उठाके ले जाना आदि, नाटकीयता उपन्यास पढ़ते समय पाठक के मन में चित्रित होती है। इस तरह प्रेमचंद ने भी अपने उपन्यासों में नाटकीयता उत्पन्न की है।

प्रेमचंद के उपन्यास 'रंगभूमि' में कथानक के अंत में विनय को गोली लग जाती है और सब उसके शव के सामने आके रोने लगते हैं। 'गोदान' में भी अचानक अफ़गान डाकुओं का आना, मालती और महता जंगल में दुसरे साथी से अलग भटक जाना अदि कई जगह नाटकीयता दिखती है।

कभी–कभी उस नाटकीयता, उपन्यास की गुणवत्ता को कम भी कर देती है। सेवासदन उपन्यास में सुमन जब जंगल में निरुद्देश्य भटक रही थी, तब अचानक स्वामी गजानंद का प्रकट होना अस्वाभाविक लगता है। इस नाटकीयता के कारण अब तक के कथानक का प्रवाह फैंटसी बन गया है।

इस प्रकार नाटकीयता भी दोनों उपन्यासकारों की भाषा का लक्षण है।

कौतुहल

इसके आलावा कौतुहल भी उन दोनों के उपन्यासों में देखा जा सकता है। 'विरागय' उपन्यास पढ़ने से पाठक के मन में कौतुहल उत्पन्न होता है कि अरविन्द की मृत्यु कैसे हुई। मडोल दूव में जब वे दो बालक उस द्वीप में जाते हैं, जहाँ साँपों का बसेरा हैं, तब भी पाठक के मन में कौतुहल होता है कि कही वे सही सलामत वहाँ रह सकेंगे।

'सेवासदन' के अंत में सब के नज़रों से गिरने के बाद सुमन जंगल में भाग जाती है। तब पाठक को लगता है कि कहीं उसकी मौत हो जाएगी, जंगली जानवर उसे मार देंगे? यही नहीं गोदान में अचानक होरी की गाय की मौत होने का प्रसंग भी पाठकों के मन में कौतुहल पैदा कराता है।

ऐसी कौतूहल भरी, नाटकीयता और रहस्यमयता से पूर्ण कथानक से दोनों लेखकों के उपन्यासों की गतिशीलता सफल हो गयी है। उपन्यास की कथा कितनी भी काल्पनिक क्यों न हो, उसको स्वाभाविक और विश्वसनीय लगना आवश्यक होता है। वस्तुतः उपन्यास, लेखक की मानसिक रचना है। पात्र निर्माण और कथा विकास उसके हाथ में हैं। यदि लेखक कलात्मक ढंग से पात्रों का निर्माण न किया होता और कथानक के गतिशील न बढ़ाया होता तो, उपन्यास रचना में खलल होती। उपन्यासकार शब्दों के माध्यम से दृश्यों को रचता है। जब पाठक उपन्यास को पढ़ता है, तब उसके मन में उस प्रसंग को चित्रित होता है।

दृश्य बिम्बों का प्रयोग

विक्रमसिंह उपन्यास द्वारा मानव मन के आतंरिक दशा दिखाते है, जो बहार से नहीं दिखती। उपन्यासकार अपनी भाषा का उपयोग कर के उस मानसिक दशा को दृश्य बिम्बों में बाँध देता है। वही क्षमता सिनेमा में आवश्यक नहीं होती। उसी से वह जीवन के सूक्षम बिन्दुओं को पाठक के सामने सजीव प्रस्तुत करता है। विक्रमसिंह और प्रेमचंद में वही कुशलता कूट–कूटकर भरी है। इसलिए उनके उपन्यास उस समय के समकालीन उपन्यासकारों की तुलना में क्रान्ति लाए थे।

गद्य भाषा को काव्यमय बनाना

यही नहीं गद्य भाषा को काव्यमय बनाना भी दोनों लेखकों के उपन्यासों का विद्यमान और एक लक्षण है। साधारण आदमी 'सूरज डूब गया' बोलता है। वही वाक्य अगर कोई कवि अपनी काव्यात्मक भाषा में बोलेगा, तो वह बोलेगा, 'सूरज अस्त हुआ', या सूरज अदृश्य हो गया'।

विक्रमसिंह और प्रेमचंद के उपन्यास पढ़ने से यह विदित होता है कि उन दोनों उपन्यासकारों ने भी अपनी भाषा को प्रभावशाली और सरस बनाने हेतु इस काव्यमय भाषा शैली का प्रयोग किया है।

विक्रमसिंह, उपन्यास द्वारा काव्यमय गद्य शैली के माध्यम से लोगों की भावनाओं को व्यक्त करने का प्रयास किया है। उपमा, रूपक, अलंकार आदि का प्रयोग करके उन्होंने अपनी गद्य भाषा को काव्यमय रूप देने का सफल प्रयत्न किया है।

विक्रमसिंह के युगांतय उपन्यास का यह प्रसंग इसका प्रमाण है। कई सालों से विलायत में पढ़कर जब अपनी संतान वापस घर आ रही हैं, तब उनके माँ–बाप और परिवार वालों को अपनी संतानों से मिलने की आतुरता, उपन्यासकार ने प्राकृतिक वस्तुओं को उपमान बनाकर बड़ी सुन्दरता से प्रस्तुत किया है। बंदरगाह पर आये हुए माँ–बाप की अपनी संतानों से मिलने की चाह, उनके अन्दर असीम आनंद से भर देती है। उस समय उपन्यासकार को क्षितिज का असमान ऐसे दिखने लगा, जैसे लाल रंग से रंजित जल रही छत। उन माँ–बाप का आनंद इतना है कि मानो समुन्दर की तरंगें बंदरगाह के स्तम्भों में टकरा–टकराकर फन फैलाती हुई खुश हो रही है।

सोमा उपन्यास से उद्धृत यह पाठ भी विक्रमसिंह की भाषा में उपमा रूपक दर्शाने का और एक प्रमाण है। '..उसका चेहरा बादलों से निकली हुई चाँद की तरह चमक रही थी। उसका हृदय प्रेम की रश्मि से आलोकित खुला हुआ एक झरोखा जैसा है जिसमें हीरे, मोती जड़ित है।'[12]

प्रेमचंद भी अपने उपन्यासों में काव्यमय भाषा का प्रयोग किया था। अपने उपन्यास कर्मभूमि में अमरकांत पीतृत्व प्राप्त करके एक असीम आनंद में खो जाता है। लेखक लिखता है– 'श्यामल क्षितिज के गर्भ से निकलने वाली लाल ज्योति की भाँति अमरकांत को अपने अन्तःकरण की सारी क्षुद्रता, सारी कलुषता के भीतर से एक प्रकाश सा निकलता हुआ जान पड़ा, जिसने उसके जीवन को रजत शोभा प्रदान कर दी। दीपक के प्रकाश में संगीत के स्वरों में, गगन की तारिकाओं में उसी शिशु की छवि थी, उसी का माधुर्य था, उसी का नृत्य था।'[13]

यही नहीं और एक प्रसंग है, जिसमें भी प्रेमचंद की भाषा का अलंकार–पूर्ण काव्यमय गद्य शैली दृष्टव्य है। 'फूस की ठंडी रात काली कमली ओढ़े पड़ी हुई थी। ऊँचा पर्वत किसी विशाल महत्वकांक्षा की भाँति, तारिकाओं का मुकुट पहने खड़ा था। झोंपड़ियाँ जैसे उसकी वह छोटी–छोटी अभिलाषाएं थीं। जिन्हें वह ठुकरा चुका था।.....पीछे ऊंचा पहाड़ किसी वृद्ध योगी की भाँति जटा बढाये, श्याम गंभीर, विकार मग्न खड़ा था। वह गाँव मानो उसकी बाल स्मृति है, आमोद–प्रमोद से रंजित, या कोई युवावस्था का सुनहरा मधुर स्वप्न।'[14]

इस प्रकार दोनों उपन्यासकरों के उपन्यास की भाषा–शैली में अलंकार, रूपक आदि स्पष्ट गोचर होता है। उपन्यासों के पात्र द्वारा उन्होंने जिन रूपक उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं को खोज निकाला हैं, वे पूर्णतया प्रभावशाली द्रष्टव्य है। उपन्यासकार की भाषा के अलंकारों को दर्शाने में यह भी एक प्रमाण है– 'क्रिया–शक्ति अंतर्मुखी हो गयी थी; मगर जब रेणुका मोटर में बैठ गयी और मोटर चली, तो श्रद्धा की वह लहर मर्यादाओं को तोड़कर एक पतली गहरी वेगमयी धरा के रूप में निकल पड़ी।'[15] यही नहीं कर्मभूमि उपन्यास की मुन्नी की करुण स्थिति को प्रकट करने के लिए लेखक ने उपन्यास भाषा में रूपक का अति प्रभावशाली प्रयोग किया था।

'उसके जीवन की सूनी मुंडेर पर' एक पक्षी न जाने कहाँ से उड़ता हुआ आकर बैठ गया था। लेकिन उसने ज्यों ही पक्षी को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, पक्षी उड़ गया और जब दूर की एक डाली पर बैठा हुआ उसे कपट–भरी आँखों से देख रहा था, मानो कह रहा हो....मई आकाशगामी हूँ, तुम्हारे पिंजरे में मेरे लिए सूखे दाने और कुल्हिया में पानी के सिवा और क्या था?'16

'मानवीकरण' अलंकार

'काव्य भाषा में अंतर्गत उपमा, रूपक के अतिरिक्त 'मानवीकरण' अलंकार का प्रयोग भी प्रेमचंद के उपन्यासों का भाषागत लक्षण है।

'कर्मभूमि' उपन्यास का यह उदहारण इसका प्रमाण है;

'फागुन का शीतल प्रभात सुनहरे वस्त्र पहने पहाड़ पर खेल रहा था।'[17]

कहावतों और मुहावरों का प्रयोग

यही नहीं कहावतों और मुहावरों का प्रयोग भी दोनों उपन्यासकार अपने उपन्यासों में भरपूर मात्र में किया। प्रेमचंद के उपन्यास कर्मभूमि का यह दृश्य इसका प्रमाण है।

'सुखदा ने विद्रोह भरे स्वर में कहा;– 'हमने आरजू–मिन्नत से काम निकालना चाहा था, पर मालूम हुआ, सीधी ऊँगली से घी नहीं निकलता।'

'जगन्नाथ ने कहा;– "तो बहूजी, अकेला चना तो भाड़ नहीं फोड़ता।"[18]

उपन्यास में मुहावरे और कहावतों के और भी कुछ उदहारण इस प्रकार द्रष्टव्य है; 'मुँह में कालिख लगाकर डूब मरूँगी... आग में कूदना....घर भूतों का डेरा है.....आटे दाल का भाव मालूम हुआ..... नाक–भौ सिकोड़ेंगे....आँख का पानी भर गया.....ऊँट पहाड़ से नीचे आकर अपनी ऊँचाई देख चूका था। आदि मुहावरों का अद्वितीय प्रयोग प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में किया है। उनके मुहावरे, भाषा के प्रवाह में ऐसे लीन हो जाते हैं कि जैसे कथानक पाठकों के मन में चित्रित हो।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि दोनों उपन्यासकारों ने रूपक और उपमा अलंकारों से भरी बिम्बात्मक भाषा का प्रयोग किया था, जिससे वे ग्रामीण लोगों की संवेदनाओं को सजीव रूप में पाठक के सामने प्रस्तुत कर सकें।

सूक्ति वाक्यों का प्रयोग भी प्रेमचंद के उपन्यासों में जगह–जगह विद्यमान है। उनमें जीवन के अनुभव और कल्पना का सुन्दर मिलन दिखाई देता है। प्रेमचंद की उपन्यास शैली की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने अपने उपन्यासों में अनुभव भरा सूक्ति वाक्यों का अधिक प्रयोग किया था।

'यथा–धर्म की क्षति जिस अनुपात से होती है, उसी अनुपात से आडम्बर की वृद्धि होती है।'[19]

'भोग–विलास, सैर–तमाशे से आत्मा उसी भाँति संतुष्ट नहीं होती, जैसे कोई चटनी या अचार खाकर अपनी क्षुधा को शांत नहीं कर सकता।'[20]

'निर्बल क्रोध और चाहे कुछ न कर सके, भगवन की खबर ज़रूर लेता है।'

'संतान को विवाहित देखना बुढ़ापे की सब से बड़ी इच्छा है।'[21]

वास्तव में इस प्रकार के सूक्ति वाक्य उपन्यासकार द्वारा किसी घटना अथवा विचार का वर्णन करते समय प्रकट होते हैं। ये उपन्यासकार की अनुभव दृष्टी के परिचायक है।

विक्रमसिंह ने भी अपने उपन्यासों में मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करके उपन्यास साहित्य को अद्वितीय बनाया। पात्र चाहे नगरीय हो चाहे ग्रामीण, विक्रमसिंह ने पत्रों की सामाजिक परिस्थिति के

अनुकूल मुहावरों और सूक्तियों का प्रयोग किया था। उनके गम्पेरलिय उपन्यास के कुछ उदहारण इसका प्रमाण है।

"साहब ने मुझे जाने को कहा। अगर मैं गाँव में रहूँ तो मेरा कुछ नहीं बनेगा।"

'मुहंदिरम ने कहा कि करोलिस ने चार सौ रुपये को मारा।'

'कटरीना ऐसी वैसी औरत नहीं बड़ी धोखेबाज़ है, मेरी भी मदद लेके बेटी को दिखाकर दुकान को साफ़ किया'

'नन्दा की तबीयत ठीक होते–होते, खर्च की वजह से मुहंदिरम का दीवाला निकल गया'

'पिछले सातों महीने आग में जलते–जलते मैंने अपनी ज़िन्दगी गुज़ारी'[22]

इस प्रकार की मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करते हुए विक्रमसिंह ने अपनी साहित्य को सशक्त बनाया।

सांकेतिकता

सांकेतिकता भी दोनों उपन्यास्स्कारों का भाषागत और एक लक्षण है। विक्रमसिंह 'गम्पेरलिया' उपन्यास में अपनी सांकेतिक भाषा के माध्यम से यह प्रस्तुत करते हैं कि महगेदार का टूट जाना पुरानी सामंत परंपरा के पतन का संकेत है, जबकि पियल के शानदार घर 'सिरिनिवस' का बनना पूँजीवाद के उत्थान का संकेत है। महागेदर मुहंदिरम, पूँजीपति सामंतियों की जड़ है। उनकी मृत्यु के बाद धीरे–धीरे महागेदर का टूटना आरम्भ हो जाता है, यानी कि सामंती समाज का पतन। साथ–साथ पियल, जो पूँजीपति समाज का प्रतिनिधित्व करता है, उसका महागेदर आना–जाना और नन्दा से विवाह करना आदि प्रसंगों से धनवाद का उत्थान। इस प्रकार विक्रमसिंह ने सांकेतिक भाषा के माध्यम से उन प्रसंगों को सजीव बनाया।

'टूटे हुए कपरेल से बारिश की बूँदें कभी घर के बरामदे में और कभी घर के अन्दर, किसी बक्से के ऊपर या फिर चटाई के ऊपर टपक रही थीं। बारिश की बूंदों की गिरने की आवाज़ रात में बिना सोये जागे हुए नन्दा को और जिनदास को सुनाई देने लगी।'[23] इसी प्रसंग से लेखक महागेदारा के टूटने से यह संकेत करता है कि सामंती समाज का पतन।

इस प्रकार प्रेमचंद भी अपने उपन्यासों में सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया था। 'सेवासदन' उपन्यास में प्रेमचंद भोली नमक वेश्या के पात्र द्वारा भाषा की सांकेतिकता स्पष्ट दिखाते हैं। वे, वेश्या की वाणी द्वार एक ओर से, समाज के कटु सत्य को सांकेतिक करते हैं और दूसरी ओर से, सामजिक रीति–रिवाजों का पर्दापाश करते हैं।

भोली कहती है; "मालूम हो जाता है कि हमारी ज़िन्दगी का क्या मकसद है, हमें ज़िन्दगी का लुत्फ़ कैसे उठाना चाहिए। हम कोई भेड़–बकरी तो नहीं कि माँ–बाप जिसके गले मढ़ दें, बस उसी की हो रहें। अगर अल्लाह को मंजूर होता कि तुम मुसीबतें झेलो, तो तुम्हें परियों की सूरत क्यों देता? यह बेहूदा रिवाज़ यहीं लोगों में है कि औरत को इतना ज़लील समझते हैं, नहीं तो और सब मुल्कों में औरतें आज़ाद हैं, अपनी पसंद से शादी करती हैं।"24 इस प्रकार प्रेमचंद समाज में स्त्री की वेश्या बनने का कारण तथा समाज में प्रचलित उन विकृतियों पर भी उल्लेख करते हैं, जो स्त्री को वैश्या बनने को विवश करता है।

इस प्रकार विक्रमसिंह और प्रेमचंद की भाषा शैली का अवलोकन करने से यही स्पष्ट होता है कि उन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों की भाषा जनता के बीच से ली गयी मुहावरों, लोकोक्तियों, उपमाओं और अलंकारों से सजी गयी है। उनकी भाषा की स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता, सजीवता और भावमयता आदि गुणों के कारण दोनों साहित्य में उनको ख्याति मिली है।

उनकी भाषा इतनी प्रभावशाली, रोचक और प्रामाणिक सिद्ध हुई कि उस भाषा की सौन्दर्य और जीवंतता के आगे परवर्ती लेखकों की भाषा भी फीकी पड़ गयी थी। उन्होंने बहुधा ग्रामीण भाषा का प्रयोग करके परिस्थिति को स्वाभाविक बनाया था। सृजनशक्ति भी उनकी भाषा में देखी जा सकती है।

लेखक का सब से बड़ी विशेषता उसकी सृजनशक्ति है। दोनों उपन्यासकारों के उपन्यास पढ़ने से यह विदित होता है कि उपन्यासों में सृजनशक्ति पराकाष्ठा पर है। प्रायः विचार बुद्धि से हीन लेखक, अपनी कृतियों के पात्रों में प्राण–शक्ति फूँक नहीं सकता, लेकिन इन दोनों उपन्यासकारों के साहित्य, पाठक के दिलो पर हावी हो गया।

उन्होंने ऐसी प्रभावशाली भाषा का प्रयोग बड़ी क्षमता के साथ किया, जिसे पाठक बड़ी सरलता से समझ सके। दोनों उपन्यासकारों ने आम जनता की बोली उनकी भाषा में प्रयोग कर के उपन्यास के पात्रों को जीवंत बना दिया।

संदर्भ सूची

1. प्रेमचंद, कर्मभूमि, पृष्ठ 123
2. प्रेमचंद, गोदान, पृष्ठ 137
3. वहीँ, पृष्ठ 70
4. वही, पृष्ठ 98
5. विक्रमसिह, गमपेरलिय, पृष्ठ 217
6. वही, पृष्ठ 233
7. प्रेमचंद, रंगभूमि, पृष्ठ 89
8. प्रेमचंद, गबन, पृष्ठ 206
9. विक्रमसिंह, गमपेरलिय, पृष्ठ 206
10. प्रेमचंद, गोदान, पृष्ठ 02
11. विक्रमसिंह, लीला, पृष्ठ 29
12. विक्रमसिंह, सोमा, पृष्ठ 29
13. प्रेमचंद, कर्मभूमि, पृष्ठ 44
14. डॉ० प्रमिला गुप्ता, प्रेमचंद और उनकी कर्मभूमि, पृष्ठ 99
15. वहीँ, पृष्ठ 82
16. प्रेमचंद, कर्मभूमि, पृष्ठ 167
17. वहीं, पृष्ठ 135
18. वहीं, पृष्ठ 148
19. डॉ० प्रमिला गुप्ता, प्रेमचंद और उनकी कर्मभूमि, पृष्ठ 101
20. वही.
21. वही.
22. डॉ० कुलतिलक कुमारसिंह, अधिनिक सिंहली उपन्यास, पृष्ठ 116
23. विक्रमसिंह, गम्पेरलिय, पृष्ठ 132
24. प्रेमचंद, सेवासदन, पृष्ठ 38